न केवल जन्म दे,
किन्तु सद्गुरु से मिलन करवाए वो

न केवल गुरु बने,
किंतु प्रभु से मिलन करवाए, वो

न केवल खुद प्रभु बनकर बैठे रहे,
किंतु सेवक को भी प्रभु बनाए वो

Scan this for Song

श्री संघ कहे
गुरूमां

Scan this for Website

महामानव महावीर

समर्पणम्

वो समर्पण गुण को

जिसने गौतम ब्राह्मण को गौतम गणधर बनाया

जिसने मुमुक्षुओं को मुनि बनाया

जिसने मुनिओ को मुक्त बनाया

जिसने कुरगडु-मृगावती को केवली बनाया

जिसने छोटे से इन्द्रवदन को

युगप्रधानाचार्य सम पूज्यपाद

गुरुदेव श्री चन्द्रशेखर विजय बनाया

अर्हं नमः

मा

गुरु मा

परमा त्मा

:: दिव्याशिष ::

सिद्धान्तमहोदधि, सच्चारित्रचूड़ामणि,

स्व. पूज्यापद आ. भगवंत **श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी महाराज** के

विनेय स्व. पूज्यपाद पं.प्रवर **श्री चन्द्रशेखरविजयजी म.सा.**

:: निश्रा प्रदाता ::

सुविशाल गच्छाधिपति सिद्धांत दिवाकर श्री जयघोषसूरीश्वरजी म.सा.

सरल स्वभावी आ. श्री हंसकीर्तिसूरीश्वरजी म.सा.

:: लेखक ::

मु. गुणहंस वि.

स्वर: फोरम बेन

स्पीच: सोनल बेन

संगीत: प्रशम - सम्प्रति

प्रथम संस्करण: 1000 प्रति-हिन्दी * चातुर्मास परिवर्तन दिवस वीर संवत २५४६

:: प्राप्ति स्थान ::

नरेशभाई

373 मिंट स्ट्रीट, दूसरा माला, श्री जिनेन्द्र श्रीपाल भवन
के सामने, महाशक्ति होटल के पास, साहुकारपेट,
चेन्नई - 600 001. मो. *98410 67888*

मनोज जैन

श्री आदिनाथ इन्टरप्राईजेस,
7, पेरूमाल मुदली स्ट्रीट, साहुकारपेट,
चेन्नई - 600 001. मो. *98403 98344*

प्रकाशक

कमल प्रकाशन ट्रस्ट

102-अे, चंदनबाला कोम्पलेक्स, आनंदनगर पोस्ट ऑफिस के सामने, भट्ठा, पालडी,
अहमदाबाद - 380 007. फोन : 2660 5355

:: Printed By ::

जगावत प्रिन्टर्स

39, नाट्टुपिल्लैयार कोईल स्ट्रीट, चेन्नई-1. फोन : 98848 14905 / 98848 14901

प्रेरणा

मा-बाप को विनती है मेरी !

संतानो को जन्म देने का काम तो गधे कुत्ते भी करते हैं।
लेकिन वो बिचारे अपने संतानो को संस्कार नहीं दे पाते हैं...

आप भी सिर्फ जन्म देकर खुश हो जाओगे,
तो क्या फर्क रहेगा आप में और पशुओं में?
आप के संतानों को इंसानियत के धर्म के संस्कार दो....

इसलिए पाठशाला में, शिविरों में, प्रवचनों में भेजों,
अच्छे मित्रों के साथ मित्रता करवाओं...
साधु-साध्वीजी से संपर्क कराओं....
सत्संगी बनाओं।

साधु-साध्वीजी भगवंतों को विनती है मेरी !

व्यापारी लोग पैसे कमाने की लालच में
अपने निर्दोष ग्राहकों का दिल देखे बिना,
उनके साथ बेइमानी करते हैं,
उनको मीठे शब्द रूपी जाल में फंसाते है।
जितना चूस सके, उतना चूस लेते है।

यदि आप भी शिष्य करने की लालच में,
पैसे इकट्ठा करने की लालच में,
गच्छ महिमा बढाने की लालच में भोले
श्रावक-व्यक्तियों को-आत्मार्थी मुमुक्षुओं को,
धर्म में नए-नए जुडे लोगों को धर्म नही बतलाओगे,
"तु मेरा शिष्य शिष्य बन.... ?" ऐसे खींचते रहोगे,
"तुझे इतना खर्च करना ही है" ऐसे जीद करोगे....

झूठे झूठे प्रोफिट बतलाओगे,
तो आप में और वो व्यापारियों में क्या फर्क रहेगा ?

आप उनको ज्ञान दो, सच्ची समझ दो,
उनके पास अपेक्षा मत रखो।
तो अपने आप वो सच्चे जैन बनेंगे...

आपके पास सब कुछ सिखकर,
आखिर में किसी दूसरे के पास वो दीक्षा ले या
संपत्ति का खर्च करे, तो रोको मत,
खुशी से सहमति दो ।

परमात्मा को विनती है मेरी !

हम कुछ भी गलत न करें,
न बोले, न सोचे
ऐसी सद्‌बुद्धि हमको देना।

युगप्रधानाचार्य सम् पूज्यपाद गुरुदेव
श्री चन्द्रशेखर विजयजी का शिष्य
मुनि गुणहंस विजय

वि.सं.2076,
कार्तिक सुद 5 ज्ञान पचंमी
अष्टमंगल विल्ला, चेन्नई

अर्हं नमः

प्यारी गुरुमैया !

आज मत रोकना मुझे...

आज तेरे उपकारो का गीत गाना है मुझे, मन भर के रोम-रोम से!

भगवान ने मुझे जन्म से ही आँखे दे दी थी।

फिर भी वह चमड़े की आँखो ने तो मुझे ज्यादा अंधा बना दिया था।

वह आंखो से मैंने संसार को देखा, उसके सुखो को देखा, आत्मा के गुणो को नही देख पाती थी वह आँखो से ।

कान भी मिले थे मुझे, प्रभु की ओर से, तोहफे के रुप में !

लेकिन वहा भी मैंने मार खाई!

सुनती रही संगीत, निंदा-मजाक-मश्करी!

प्रभु के वचनों को सुनने के लिए राजी नही थे, वे दो कान!

जिनशासन की दृष्टि से मैं थी अंधी और बहरी गुरुमैया !

आपने मुझे नयी आँखे दी...

जो आत्मा के गुणो को देखने लगी...

क्षमा-नम्रता-ब्रह्मचर्य-सरलता आदि सब गुण अब मैं देख पाती हुँ...

आपने मुझे नये कान दिये...

तमन्ना जगी है मुझे प्रभु वचन सुनने की ..

दौड़ने लगी हुँ मैं सद्गुरु की वाचना सुनने के लिये ...

निंदा और नींद छोड़ने लगी, भोजन छोड़ने लगी, सब सहन करने लगी ... सिर्फ प्रभुवचन-गुरुवचन सुनने के लिए!

दानेश्वरी गुरुमैया! कोटि कोटि वंदन हो आपको ...

अंधी थी संसार प्रेम में, बहेरी थी प्रभु वचन में,
मुझे आँख कान की भेंट दे दी तुने .. गुरुमा, गुरुमा, गुरुमा, गुरुमा...

* * * * *

लोहे की हथकड़ी तोड़ना आसान !

लेकिन मम्मी-पापा-भाई-बहन-मित्र आदि का स्नेहराग तोड़ना अतिकठिन!

जब से मैने धर्म को जाना है.. तब से मैने इतना तो समझा ही था कि यह स्नेहराग गलत है। वे स्वजन परलोक में कहां सहायता करने आने वाले है?

इसलिए भावना तो प्रगटी थी कि 'मैं स्वजनों के प्रति के स्नेहराग को तोड दुँ' लेकिन नहीं हो पाया मुझसे....

प्रथम बार सिर्फ एक दिन पौषध किया, तो भी सब की याद आने लगी। पर्युषण में आठ दिन पौषध किया, तब तो मैने उनकी यादों में आंसु भी बहाए।

उपधान करने बैठी, तब तो हद हो गई.... आधा उपधान छोड के भाग आई मैं। बहाना बनाया बीमारी का, हकीकत थी मम्मी-पापा की याद !

आखिर हार मान ली थी मैंने,

नक्की कर लिया था मैंने,

शादी के बाद पति... बच्चे....

बस! जिंदगी पूरी हो जाएगी....

लेकिन.... रात गई, सवेरा हुआ... अंधकार गया, उजाला हुआ....

अचानक आपसे मिलन हुआ।

आपको पहली बार देखा, ठंडक का एहसास हुआ मुझे!

परिचय बढा, आपके पास पढाई की.... आपका वैराग्य देखा, आपकी नि:स्पृहता देखी, मुझे शिष्य बनाने की कोई लालसा नहीं देखी आप में, 'तु मेरी शिष्या बनना' यह कभी नहीं कहा आपने....

बस एक निर्दोष प्रेम देते ही रहे।

कोई स्वार्थ नहीं, कोई मलिनता नहीं, सच्चा प्रेम! शुद्ध प्रेम!

सिर्फ मेरी आत्मा का हित चाहता था वो प्रेम!

मुझे पता भी नहीं चला कि मैं कब आप में खो गई.... कब मैं स्वजनो को याद करना भूलने लगी, कब मैं मन से स्वजनों से दूर हो गई.... गुरुमैया!

उस दिन मुझे ध्यान आया कि मेरे में ताकत आ चुकी है स्नेहराग के बंधन को काटने की!

विहार था आपका दूसरे शहर में ..... उस दिन!

मैं बहुत ही उदास हो गई थी....

आपको विदाई देने आई थी मैं...

थोडे दूर तक आपके साथ चली थी मैं.....

चोविहार का समय होने वाला था, इसलिए मैं रूक गई....

रास्ते पर ही आपको वंदन करने लगी,

जब आप के चरणों को मैंने छुआ, और पता नहीं क्या हो गया मुझे...

मैं जोर-जोर से रो पडी.... सर पर हाथ रखा आपने।

पीठ थपथपाकर आपने प्रेम दिया, आप आगे बढे.... जब तक आप दिखे, तब तक मैंने देखा, आंसु नही रूके, मैने रोके भी नहीं...

घर गई मैं, खाना नहीं खाया मैंने, नहीं खा पाई मैं.... बस, रोती रही।

एक दिन... दो दिन... तीन दिन...

मम्मी-पापा मेरा दु:ख, मेरे आंसु देख देखकर दु:खी हो गए थे।

आखिर एक दिन अचानक ही पूरा परिवार मुझे लेकर विहार में आप के पास आया, "म.सा.! प्राण से प्यारी बेटी दे रहे हैं आपको! वो आपके बिना तडप - तडप कर मर जाएगी।"

बस, उस दिन की मेरी खुशी, अब तक की जिंदगी की सब से बडी खुशी थी।

रोज खुशी, रोज पढाई, रोज वैराग्य, रोज मस्ती!

बंधन को काटने के लिए कटारी की जरूरत होती है।

वो मिल गई आपसे, आपका प्रेम!

कंधो में ताकत भी चाहिए बंधन काटने के लिए।

आपने वो भी दिया, संसार के प्रति घोर वैराग्य!

गुरुमैया!

बंधन तोड के...

सब कुछ छोड के...

आज तेरे पास दीक्षा को स्वीकार करने आई हुँ।

माता-पिता आदि स्वजनों के बंधन में, स्नेहराग से बंधा था मन मेरा पहले... चाहना थी बंधन को तोडने की अंतर में, कायर बनकर फिर भी हार मान ली थी मैंने...

प्रेम की कटार पा के तुम से,
वैराग्य बल पाके तुम से,
बंधन तोड के आई तेरे पास....
सब कुछ छोड के आई तेरे पास.... गुरुमा..... (4)

***

3

समझ बैठी थी मैं कि स्वजनों का राग छूट गया, यानि मैं जीत गई....

गलत थी वो मेरी सोच!

नहीं मालुम था मुझे कि मुझे मारने वाला दूसरा एक भयानक शस्त्र है। वो है **कामराग**

मुझे मेरे खुद पर ही बहुत राग था।

रूप अच्छा दिया था कुदरत ने मुझे...

बार - बार मिरर में देखना...

लंबे-लंबे सांवले-सॉफ्ट बालो को अच्छी तरह संवारना,

साबुन आदि का इस्तेमाल करके उसको निखारना....

काजल-पाउडर आदि से उसको भडकाना...

अलग-अलग डीजाईनवाले कपडो से अपने आपको सजाना....

एक हिरोईन बनकर रहना...

यह मेरा स्वभाव बन चुका था।

नस-नस में खून की तरह, आत्मा के प्रदेश-प्रदेश में बह रहा था यह!

.... न जाने कितने दिन, कितने महिने मैंने मेरी जिंदगी के इसके पीछे बिगाडे होंगे?

गुरुमैया!

मैं पूरा तो नहीं बोल पाउंगी, लेकिन फिर भी मुझे बोलना है।

रूप था, संपत्ति थी, यौवन था, आकर्षक कपडे थे, आकर्षक मेकअप था, कॉलेज आदि का माहोल था, मोबाइल था, मूवी थी, नेट था, लेपटॉप था, गलत निमित्तो का ढेर चारों ओर पडा हुआ था.... सबसे बडी चीज अज्ञान था।

भान ही नहीं था... मुझे कि मेरी पवित्रता ही मेरा गहना है, मेरा प्राण है, मेरा जीवन है।

मन के पाप, वचन के पाप, काया के पाप....

पवित्रता को कितने सारे दाग लगे..... मैंने खुदने लगाए।

सफेद वस्त्र श्याम वस्त्र ही बन गया....

क्षमा करना गुरुमैया!

नहीं बोल पाउंगी वो सब मैं,

हिम्मत ही नहीं है मेरी.... काजल से भी काला मेरा मन, मेरे शब्द, मेरी काया! बस, आप समझ लेना, आप ज्ञानी हो!

'अब्रह्म के विकारों के, वासना के फल कैसे होते है।' वह सब प्रवचनों में सुना।

लक्ष्मणा की, रुक्मिणी की कहानी पढी, सुनी।

कंपन शुरू हो गया, रोम-रोम में।

क्यां होगा मेरा? मैं तो सब कुछ खो चुकी हुँ! और अभी भी कहां मेरा यह पुद्गलराग खत्म हुआ है?

लेकिन यह कमाल भी आपने ही की गुरुमैया!

आपकी पवित्रता को नजरो से देखा, हृदय से अनुभव किया, अंतर से चाहने लगी उस पवित्रता को!

पुरुषो से बात करनी ही पडी, तो भी नम्र आंखो से बात करते हुए आपको मैंने देखा।

तमाम इलेक्ट्रिक साधनों से दूर रहकर स्वाध्याय-ध्यान-क्रिया में ही मग्न रहते हुए आपको मैंने देखा।

न आपको मैले कपडो का काप निकालने की फुरसत!

न आपको देह पर लगे हुए मेल को दूर करने की फुरसत!

न आपको आपके रूप का कोई राग!

न आपने कभी मिरर में एक सेकंड के लिए भी अपने आप को देखा....

फिर भी आपकी प्रसन्नता आसमान को छुती थी....

आपका ब्रह्मचर्य का तेज आंखो में अंजन कर देता था....

धिक्कार आ गया मुझे मेरे ही उपर।

प्रभु के पास जाकर रो पडी मैं! "**<u>प्रभु! मुझे मेरी गुरुमैया जैसा बनना है....</u>**"

आपके जीवन ने आपकी वाचना ने मुझे भान करवाया कि "पुद्गल का रूप तो तुच्छ है। राख बनने वाला है यह शरीर!

आत्मा का स्वरूप देख! अनंतगुणसमृद्ध है आत्मस्वरूप! उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। केवल अनुभव किया जा सकता है।"

और, आज मैं खुद्दारी के साथ कहती हुं गुरुमैया!

भूल गई उन पुद्गलो को मैं....

सिर्फ पूजा के लिए बहुत ही कम पानी से स्नान करती हुं....

मेकअप छोड दिया....

एक जोडी कपडे सात-सात दिन पहनती हुं.... वो भी सामान्य....

गहने पहनना छोड दिया मैंने....

विकार-वासना मरने पडी है मेरी....

मैं पवित्र बन रही हुं...

पुरुष के सामने देखने की भी इच्छा नहीं होती है.....

सगे भाई-पापा को भी पराया पुरुष मान रहा है मेरा मन! आपकी ही तरह नजर झुकाकर ही बात करती हुं ...

मेरा भय निकल गया है अब....

मैं श्रमणी बनुंगी, उत्तम आराधना करुंगी....

जल्दी से जल्दी मोक्ष को पाउंगी।

ये सब आपका ही उपकार!

आपके पैरो को धोकर वो पानी मैं पी जाउं.... ऐसा मन करता है।

आपके पैरो को धोकर वो पानी शरीर पर लगा दुं.... ऐसा मन करता है।

गुरुमैया! मेरे भगवान! मेरे परमेश्वर!

बहुत बहुत बहुत धन्यवाद आपको....

अच्छा लगता था पुद्गल का रूप देखना

पुद्गल का राग मेरी रग-रग में बहेता था

बोलने की हिम्मत ना हो ऐसी जिंदगी

'होगा परलोक में क्या', नस नस मैं यह भीति....

आतमरूप दिखलाया तुमने, बेहद झंखना जगाई तुमने....

पुद्गल भूल के आई तेरे पास...

भीति तोड के आई तेरे पास

सब कुछ छोड के आई तेरे पास... गुरुमा...4

* * *

पशु की दुनिया में सब से ज्यादा परेशान करने वाली चीज है कभी भी कुछ भी खाते ही रहना! जिसको आहारसंज्ञा बोलते है।

मुझे लगता है कि मैं पशु के भव से ही आई हुं इस मनुष्य भव में।

नौ महिने गर्भ में माता का खाया हुआ खाया मैंने,

जन्म लेने के बाद माता का दुध पीया मैंने....

मान लेती हुं कि यह सब तो कुदरत की व्यवस्था है।

लेकिन थोडे बडे हो जाने के बाद भी मैंने कहा भान रखा है खाने में?

अंडे के रसवाली चॉकलेट्स खाई मैंने,

पशुओ की चरबीवाले बिस्कीट्स खाये मैंने,

बेइन्द्रियजीवों वाली बासी चीज़ खाई मैंने,

ढेर सारे जीवों की कतल चलाने वाली होटल की चीजे खाई मैंने,

साउथ इन्डियन भी खाया, पंजाबी भी खाया,

राजस्थानी भी खाया, गुजराती भी खाया....

पशुओ की तरह ही गलिओ में भटक कर लॉरी पर, दुकानों पर खाती ही रही।

न देखा जमीनकंद!

आलु-प्याज मेरे प्रिय बन गये, भले कितने भी, अनंत भी जीव मरे....!

सुबह चार-पांच बजे भी खाया, तो रात को दो बजे भी खाया....

थिएटर में इन्टरवल के वक्त भी खाया, स्कूल में इन्टरवल के वक्त भी खाया।

कॉलेज की कैंटीन में भी खाया, रेलवे स्टेशन पर भी खाया,

मुंबई की खाउधरा गली में भी घुमकर आई....

हजारो चीज खाई होगी अभी तक मैंने....

जैसे वो सुअर गंदी विष्टा भी खाने को दौडता है,

वैसे मैने गंदी से गंदी भी चीजे खाई.....

बन गई थी मैं कसाई, त्रस और स्थावर दोनो प्रकार के जीवों की!

सच कहुं तो एक डाकन ही बन गई थी, जो किसी को भी खा जाए।

कभी-कभी तप में खाना छोडा, तो पारणे में दुगुणा तीनगुणा खा लिया....

कभी-कभी आठम-चौदस को लीलोतरी के साथ-साथ बहुत कुछ ॐ स्वाहा किया।

यह था मेरा भयानक भूतकाल!

आज का मेरा भव्य वर्तमान !

मैंने तमाम अभक्ष्य संपूर्ण छोडा,

मैंने जमीनकंद संपूर्ण छोडा,

मैंने होटल संपूर्ण छोडी,

मैंने खाने की बात में सामान्य जीवन अपना लिया है गुरुमैया!

आपने मुझे कहा था एक दिन - "खा-खा कर क्या मिलेगा तुझे? यह पेट तो कचरे का डब्बा है, उसमें कचरा ही डालना चाहिए। वहां सोना-चांदी-कपडे नहीं डाले जाते। शरीर हमारा काम करे, बस उतना खाना दो। जीभ के राग का पोषण मत करो.... आयंबिल की ओली करो..."

और आपके कहने पर मैंने ओली का पाया भरा।

उस वक्त भावना हुई थी, कि पूरे जीवन में 200-300 ओली वर्धमान तप की करुंगी।

पू.सा. **हंसकीर्ति** श्रीजी, पू.आ. **हेमवल्लभसूरिजी** जैसी घोर तपश्चर्या करुंगी।

यह आदर्श था मेरा, आपने ही तो दिया था।

लेकिन पाया भरने के समय मुझे मालुम पडा कि "**मेरा आदर्श महान है, लेकिन मेरा शरीर काम नहीं करेगा।**"

क्युंकि मुझे वो 20 दिनों में बहुत बार वोमिट हुई।

शरीर में बहुत ज्यादा अशक्ति आने लगी।

पूरा शरीर वायुरोग के कारण से सुस्त रहता।

आपने यह सब देखा।

आपकी लंबी सोच की तो जितनी तारिफ करुं उतनी कम!

21वें दिन पारणा हो जाने के बाद रात को आपने मुझे बुलाया, शाता पूछी, फिर कहा....

"अब से तुझे तप पर नहीं, **त्याग** पर ध्यान देना है।

तुझे एकासना करना है।

घी वाली रोटी भले वापर, लेकिन सब्जी-दाल के साथ नहीं, सिर्फ रोटी खानी।

सब्जी भी अकेली ही खानी...

दाल भी अकेली ही खानी...

चावल भी अकेले ही खाने...

नमकीन - तली हुई चीजे बंद...

शरीर की शक्ति के लिए हफ्ते में एक-दो बार मिठाई खानी पडे तो उसका स्वाद बिगाडकर खानी, दाल के अंदर चूरकर खानी, पानी में भीगोकर खानी....

मुँह के अंदर कवे को दाए-बाए घुमाना नहीं, सिर्फ लेफ्ट या फिर राइट साइड से ही कवा चबाकर पेट में उतार देना।"

मैं तो आश्चर्य में डूब गई, आपने क्या उपदेश दिया मुझे....

महान तप के जितना ही फल दे, ऐसे त्याग का उपदेश दिया आपने....

तप करना था आखिर आसक्ति से छूटने के लिए...

तो वो काम मेरे लिए आसान बन गया, तप की जगह पर ऐसा त्याग करने से गुरुमैया!

प्रभुवीर के 14000 शिष्यो में जो सबसे बेस्ट थे, वो धन्नाजी की स्टोरी सुनाई आपने मुझे। तब मुझे ध्यान आया कि "बडा तप करो, न हो सके तो

श्रेष्ठ त्याग करो, दोनों जगह पर वैराग्य का भाव ही जरूरी है।''

ओ परमतारक गुरुमैया!

आज वो वैराग्य पा लिया हैं मैने आपकी कृपा से...

कितना सुंदर समझाया था आपने मुझे ''छोटे बच्चे ने यदि अपने हाथ में चाकु पकड ली है, तो वो छुडवानी जरूरी है। लेकिन वो ऐसे ही नहीं छोडेगा। उसको खिलौना दे दो, तो वो छोड देगा।''

वैसे ही यह मन छोटे बच्चे जैसा है। खाना-पीना आदि बहुत सारे राग रूपी चाकु उसने पकड के रखे हैं। वो ऐसे ही रागमुक्त नहीं होगा।

जब उस मन में स्वाध्याय का, वैयावच्च का, प्रभुभक्ति का, गुरु का राग जन्म लेगा, तो अपने आप वो गलत राग निकल जाएगा।

और सही में मैने यह भी किया है।

संसार के पदार्थो में महावैरागी बन गई....

देव-गुरु-धर्म में महारागी बन गई....

महावैराग - महाराग का समन्वय हुआ है मेरी आत्मा में!

दुध में शक्कर मिल गई है गुरुमैया!

रसना रस से भीगी थी पलपल मेरी तो,
रसपोषण को भटकी थी पागल बन मैं तो,
विष्ठा में सुअर जैसी हालत मेरी थी,
त्रसस्थावर जीवो की हत्या मैं करती थी,
सही मानो तो डायन जैसी मैं बनती गई...
तप का आदर्श दिया तुमने, त्याग का उपदेश दिया तुमने...
धन्ना का भाव दिया तुमने, आसक्ति छुडवाई तुमने...
वैरागी होकर आई तेरे पास, राग मोड के आई तेरे पास....
संज्ञा तोड के आई तेरे पास, सब कुछ छोड के आई तेरे पास....गुरुमा(4)

* * *

हर एक सासु को एक डर रहता ही है कि आने वाली बहु मेरा मानेगी या नहीं? कम से कम मुझसे झगडा तो नहीं करेगी ना? परिवार की शांति का भंग तो नहीं करेगी ना?

गुरुमैया!

शायद आपको भी मेरे लिए यह भय होगा ही, "ये मेरी आज्ञा मानेगी या नहीं? या अपनी ही मनमानी तो नहीं करेगी ? मेरे साथ संघर्ष तो नहीं करेगी? मेरी सेवा भले न करे, लेकिन मेरे परिवार की शांति को आग तो नहीं लगाएगी ना?" तो सुन लीजिए मेरे परमेश्वर तुल्य गुरुमैया!

महाभारत में जैसे भीष्म **पितामह** ने भीष्म प्रतिज्ञा ली थी पूरी जिंदगी ब्रह्मचर्य का पालन करने की...

उसी तरह मेरी भी दृढ प्रतिज्ञा है,

आप बोलो और मैं न करुं ऐसा कभी नहीं होगा।

एकलव्य ने गुरु के लिए अंगूठा काटकर दिया।

गुरु के कहने से वो **शिष्य** सांप के मुंह के दांत गिनने गया....

गुरु ने सोते हुए **शिष्य** की छाती पर बैठकर हाथ में चाकु ली! शिष्य उठ गया, एक बार हाथ में चाकु लेकर अपनी छाती पर बैठे हुए गुरु को आंखों से देखा लिया।

और आंखे बंद कर के, शांति से सो गया। तनिक भी विचार भी नहीं आया कि "गुरु मुझे मार डालेंगे क्या?"

इन सभी का एक ही विचार था...

"गुरु जो करे, सब बराबर ही होता है

हमारे प्राण जाय तो भले जाय, लेकिन गुरु के वचनों का पालन हम करके ही रहेंगे।"

गुरुमैया! मैं ऐसी बनुंगी... ले लेना आप मेरी परीक्षा!

मैं मर चुकी हुं, मैं नया जन्म ले के आप स्वरूप बन चुकी हुं।

जब मैं हुं ही नहीं तो, मुझे किस बात का डर?

आप कहोगे मासक्षमण कर!

मेरी नवकारसी की ही ताकत होगी, तो भी मैं पूरे उत्साह से पच्चक्खाण लुंगी...

आप कहोगे कडी धूप में घंटा गोचरी घूम...

चमडी जल जाए, तो भी निकल पडुंगी मैं....

आप कहोगे रात को सोना मत....

कितनी भी निंद आए, खडे रहकर, चलकर, किसी भी तरीके से मैं जागती ही रहुंगी।

आप कहोगे दिन में 10 बार खाना है।

मेरी ओली आदि तपश्चर्या की भावना को भूलकर 10 बार खाउंगी....

आप कहोगे टेरेस पर जाकर, वहां से नीचे कुद जा...

नहीं सोचुंगी मैं! कि "मेरा क्या होगा?" मर जाउंगी मैं?

अरे, मर ही तो गई हुं मैं! एक भव में दो मौत नहीं आती है कभी भी!

जानती हुं मैं कि आपको यह लगता होगा कि ऐसी बातें करना आसान है, लेकिन जब अवसर आए, तब करके दिखाना वो लोहे के चने चबाने जैसा है।

आपको ही नहीं, मुझे खुद को भी यह डर लगता ही है कि "क्या मैं मेरी यह भावनाओं को प्रेक्टिकल जीवन में जिंदा कर पाउंगी?..."

कृपानिधि!

आप ही कृपा करना मुझ पर!

रोज मंदिर में आंखो के आंसु के साथ भीख मांगती हुं प्रभु के पास....

'भगवान मुझे मार डालना, मेरी तमाम इच्छाओं को खत्म कर

देना।'

मुझे मालुम है कि अगर हृदय के एक कोने में भी मेरी खुद की एक भी छोटी सी भी इच्छा जिंदा होगी न, तो वो मैं ही जिंदा हुं। और जब गुरु की इच्छा मेरी वो जिंदा इच्छा से विपरित होगी, तब मेरे में समर्पण मर जाने की पक्की संभावना है। मैं मेरी जिंदा इच्छा को पूरी करने के लिए गुरु की इच्छा पूरी नहीं करुंगी । उनको मना कर दुंगी, जिद करुंगी मैं! गुरु तो उदार होकर तुरंत मेरी इच्छा के लिए मान भी जाएंगे। आखिर माँ है न वो तो!

लेकिन, मेरे समर्पण की मौत होगी यह!

यानि की मेरी साधुता की हत्या होगी यह।

हत्यारी बनुंगी मैं खुद!

यदि मेरी इच्छाएं मर गई, तो मेरा समर्पण जिंदा! मेरी साधुता जिंदी!

यदि मेरी इच्छाए जीवित रह गई, तो मेरा समर्पण खत्म! मेरी साधुता खत्म!

इसलिए भगवान!

मार डालना मेरी प्रत्येक इच्छाओं को.....

बस बाद में बाकी ही क्या रहा?

फिर तो जो गुरु की इच्छा वो ही मेरी इच्छा!

जो गुरु का मन, वो ही मेरा मन!

देह दो, आत्मा एक!

कोई मुझे पूछे कि 'तुझे क्या चाहिए?' तो मेरा जबाव एक ही होगा ''गुरु के मुह पर प्रसन्नता! स्मित! मुस्कान!''

कोई वापस पूछे 'क्युं? मोक्ष नही चाहिए?

दीक्षा तो मोक्ष के लिए है न?' तो मैं हंसकर जबाव दुंगी '' हां! मोक्ष ही चाहिए।

गुरु की प्रसन्नता ही तो मेरा मोक्ष है। उसके बिना मोक्ष कभी नहीं

मिलेगा।''

बिचारा पूछने वाला भी दंग रह जाएगा ।

रोज ऐसी प्रार्थना कर रही हुं मैं गिली-गिली आंखो से हृदय से...

सच में गुरुमैया!

यह प्रार्थना करते वक्त बहुत बार - बहुत बार मेरे भाव इतने तीव्र हो गए थे कि उस वक्त मेरे रोम-रोम में मैने कंपन महसुस किया।

एक अलग ही प्रकार का वो संवेदन था। वो करोडो रोम का कंपन जैसे कि भगवान के मेरे उपर करोडो आशीर्वाद थे।

अब मेरा विश्वास आसमान को छु रहा है....

हद पार के आंसु बहा चुकी हुँ मैं!

मेरी स्वच्छंदता को, असमर्पण को, गुरुद्रोह को खडे करने वाले तमाम पापो को धो दिया है इन आंसुओ ने!

मेरे कारण आपको यदि एक क्षण भी चिंता करनी पडे वो कलंक होगा मेरे लिए।

लेकिन कभी नहीं होगा ये!

पक्का वादा..., हर एक बात तेरी मानुंगी...
खुद को भूलकर तुझ में लीन मैं बन जाउंगी...
इच्छा बस एक मेरी... इच्छा सब मर जाए,
हर एक तेरी इच्छा मेरी बन जाए।
तेरी मुस्कान मेरा मोक्षसुख बन जाए,
रोम-रोम में है ये भावना,
बहती आंखो की है ये प्रार्थना!
खुब रोकर आई तेरे पास
पाप धोकर आई तेरे पास....
सब कुछ छोड के आई तेरे पास... गुरुमा...(4)

* * *

प्रार्थना की आग में तमाम इच्छाएं जलाकर राख कर दी मैंने!

फिर भी जैसे अग्नि में हजारों मुँग पकने के बावजूद भी कडक मुँग कभी नहीं पकता...

वैसे ही मेरी एक इच्छा नहीं मरी, वो जिंदा तो रही ही । उल्टी आग में जैसे गोल्ड ज्यादा चमकने लगता है, वैसे ही मेरी एक इच्छा प्रार्थना के बाद तो ज्यादा तीव्र हो चुकी।

हैरान हो रही हुं ये एक इच्छा को लेकर,

नही पूरी हुई यदि ये इच्छा, तो मैं हैरान - हैरान हो जाउंगी....

रात को आधी नींद से जगती हुं मैं, और चिंता में पड जाती हुं मैं....

रोज बराबर वो चिंता मेरे मन को खा जाती है....

चैन चला गया मेरा....

आपको बोलने की भावना नहीं थी... क्युं आपको परेशान करना?

लेकिन अब मेरी सहनशक्ति की हद हो चुकी है।

माफ करना मैया!

आप को बोल देती हुँ मैं...

मेरी चिंता यह थी कि...

दीक्षा के बाद

गुरुमैया मुझे पढाई के लिए दूसरी जगह पर भेज देंगे तो?

चातुर्मास के लिए दूसरी जगह पर भेज देंगे तो?

मेरी बीमारी में दवाई के लिए दूसरी जगह पर भेज देंगे तो?

पर्युषण की, ओली की आराधना के लिए दूसरी जगह पर भेज देंगे तो?

संवत्सरी का प्रतिक्रमण करवाने के लिए दूसरी जगह भेज देंगे तो ?

नहीं नहीं.....

मैं गुरुमैया से अलग कैसे हो पाउंगी ? कैसे रह पाउंगी ?

मुझे ऐसी पढाई नहीं करनी...

मुझे ऐसे चातुर्मास-शासनप्रभावना नहीं करनी...

मुझे मेरी बीमारी की ऐसी चिकित्सा नहीं करवानी...

मुझे पर्युषण आदि की ऐसी आराधना नहीं करवानी...

एक दिन भी अलग नहीं रहना है मुझे

ओ मा !

आपकी बेटी की ये एक इच्छा पूरी कर देना,

मैं अज्ञानी, प्रमादी, कषायवाली हुं ही !

मेरी गलती होगी ही....

लेकिन उसकी यह सजा तो आप मत ही देना कि मुझे एक दिन भी अलग होना पडे...

उपवास, अट्ठम जो सजा देनी हो, वो दे देना, लेकिन दूर होने की सजा तो नहीं ही !

इतनी तो क्षमा आपको मुझे देनी ही पडेगी।

यह मत समझना कि मुझे आप पर स्नेहराग है, अंधराग है।

हां ! राग जरूर है, लेकिन वो संसारीओ जैसा मलिन राग नहीं है।

जिनशासन में शोभे, ऐसा पवित्रराग है।

मेरी यह जिद में एक राग छुपा हुआ है।

तमाम गुणो को पाने की, मेरे तमाम दोषो को खत्म करने की भावना जब तीव्र बनी, तब मैंने सोचा कि इसके लिए तो साक्षात प्रभु की ही जरूरत

है मुझे। लेकिन वो तो मिल नहीं पाएंगे। तो मै **जयवीयरायसूत्र** में रोज ''**सुहगुरुजोगो**'', शब्द बोलने के वक्त रुक जाती, और मांगती प्रभु से, ''**आप नहीं, तो आपके जैसे ही सद्गुरु देना**''...

निष्फल नहीं जाती कभी भी प्रार्थना हां! समय शायद लग सकता है...

उसके बाद ही आपका मिलन हुआ....

गुरुमैया!

गॉड गिफ्ट हो आप मेरे लिए...

नहीं-नहीं, गॉड ही हो...

भगवान जाने कि मुझे बोलकर गए हैं, ''बेटी! अब मेरी अपेक्षा मत रखना। ये गुरु मैं ही हुं, ऐसा ही समझना...''

बस उसके बाद देव और गुरु दोनो मेरे लिए तो आप ही हो।

मैंने आपको अभी तक जो कहा कि,

मैं मेरे माता-पिता-स्वजन आदि सब परिवार को छोडकर आपके पास आई हुं,

मैं मेरे मेकअप, कपडे, गहने आदि सब सुखों को छोडकर आप के पास आई हुं,

मैं मेरे खाने-पीने के तमाम सुखों को छोडकर आप के पास आई हुं,

मैं मेरी तमाम इच्छाओं को छोडकर आई हुं,

वो अब मुझे गलत ही लग रहा है।

क्या सुख छोडा मैने? किसको छोडा मैंने?

आप मिले, सब कुछ मिल गया.... सब कुछ पा लिया...

मुरख दुनिया मुझे त्यागी मानती है... मैं तो खुश हुं, बहुत बहुत खुश हुं...

विनती है मेरी एक अंतर से सुन लेना,

मुझको आप आपसे दूर कभी मत करना...

भूल होगी मेरी माफी आपको देनी ही है,

गलती कुछ भी करे बालक, मा तो प्रेम करती है....

मांग के प्रभु से पाया तुमको,

भेट रूप दिया प्रभु ने तुमको,

प्रभु मान के आई तेरे पास...

प्रभु भूल के आई तेरे पास...

सबकुछ पाकर आई तेरे पास...

गुरुमा... गुरुमा... गुरुमा... गुरुमा...

***

।। नमोस्तु तस्मै जिनशासनाय ।।